ISSN - 2229-3620
UGC CARE LISTED JOURNAL
KIS

शोध संचार
बुलेटिन

January-March, 2021
Vol. 11, Issue 41
Page Nos. 5-7

AN INTERNATIONAL BILINGUAL PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

आंचलिक उपन्यासों में अभिव्यक्त नवीन चेतना एवं यथार्थ

पूनम सिंह*
प्रो0 देवेन्द्र नाथ सिंह**

शोध सारांश

आंचलिक उपन्यास सच्चे अर्थ में आधुनिक नहीं है या उसकी विषयवस्तु आधुनिक जीवन को प्रतिबिम्बित नहीं करती। आंचलिक यानी ग्राम कथा और इस ग्राम कथा में यथार्थ व नवीन चेतना किसी प्रकार सामने आती है वह इन विभिन्न आंचलिक उपन्यासों के द्वारा बताने का प्रयास किया गया है। ग्रामीण अंचलों में शोषण, अन्धविश्वास, पिछड़ापन, कूपमण्डूकता होने के पश्चात् भी लोगों में समय के साथ सोच व व्यवहार में नवीनता व चेतनता का संचार किस प्रकार होता है वह हमें इन विभिन्न पात्रों के द्वारा देखने को मिलता है। 'मैला आँचल' में किसान ही नहीं, छोटी और नीच कहीं जाने वाली जातों और आदिवासियों में भी ऊपर उठने की जबर्दस्त हलचल दिखायी देती है। मैला आँचल के छोटे–छोटे पात्र भी आजादी के बाद की दुनिया के प्रति निरन्तर जागरूक दिखाई देते हैं। ग्रामीण अंचलों में अशिक्षा, राजनीति, शोषण होने के पश्चात् भी हमें 'सूरज किरन की छाँव', 'मैला आँचल', 'जल टूटता हुआ' आदि उपन्यासों के पात्रों में जीवन यथार्थ किसी न किसी गम्भीर पहलू को उद्घाटित करते दिख जाते हैं। यह कहना गलत नहीं होगा कि अछूते अंचलों के प्रति लेखकों की दृष्टि जाने के परिणामस्वरूप उपन्यास की रचनावस्तु का विस्तार हुआ और देश के अनेक अछूते और अपरिचित भू–भागों से हमारा परिचय हुआ। उन अंचलों के खण्ड–खण्ड जीवन के द्वारा हमारी जातीय पहचान सघन और समृद्ध हुई।

Keywords : शोषण, अन्धविश्वास, जागरूकता, ग्रामीण अंचल, परती परिकथा, मैला आँचल, जल टूटता हुआ।

वर्तमान वैज्ञानिक युग में जबकि संसार द्रुत वेग से छोटे से छोटा होता जा रहा है, दूरागत पिछड़े अंचल भी इससे अछूते नहीं रह गए हैं। नवजागृति व नवनिर्माण की किरणे वहाँ छिटकने लगी है। सामाजिक, धार्मिक आदि सभी क्षेत्रों में अन्धविश्वास पर आधारित रूढ़िग्रस्त परम्पराओं व मान्यताओं के प्रति अनास्था के साथ–साथ अपने अधिकारों के प्रति सचेतनता व शोषण के प्रति विद्रोह के लक्षण भी वहाँ दृष्टिगत हो रहे हैं जो कि शुभ हैं। उदाहरण के लिए 'परती परिकथा' में पूर्णिया जिले के परानपुर गांव से बाहर गया हुआ जितेन्द्रनाथ दस–पन्द्रह वर्ष बाद जब पुनः लौटकर आता है तो देखता है पुराना सब कुछ समाप्त हो रहा है। नवीनता का तेजी से संक्रमण हो रहा है और न केवल परानपुर बल्कि ''सभी गांव टूट रहे है। गांव के परिवार टूट रहे हैं, व्यक्ति टूट रहा है रोज–रोज, कांच के बर्तनों की तरह। निर्माण भी हो रहा है... नया गांव, नए परिवार और नए लोग।''[1]

अर्थात् नए गांव, नए परिवार और नए लोग, नवीन मानवीय मूल्यों व चेतना शक्ति को लेकर उभर रहे हैं, जहां सड़ी–गली जर्जर परम्पराओं के प्रति उपेक्षा का भाव है। सवर्णों एवं अछूतों के झगड़े अति प्राचीनकाल से चले आ रहे है। गांधीजी ने जबसे अछूतों का उद्धार कर उन्हें मानवीय पद प्रदान किया है उनमें अपने अधिकारों के प्रति पर्याप्त सजगता आई है। उदाहरण के लिए 'लोक–परलोक' में देखते हैं, लोधे व चमारों में उच्च वर्ग के प्रति विक्षोभ का भाव विद्यमान है। विशेषकर नवयुवक पीढ़ी तो ब्राह्मण वर्ग को देवता मान स्वयं को उनसे नीचा दर्जा देने को किसी भी तरह तैयार नहीं है। बाजार में खड़े ललिता पंडित ने ज्योंहि पान की पीक थूकी तो तेजी से जाते हुए धनुआ लोधे पर गिर पड़ी फिर क्या था वह कहने लगा– ''देखिके थूकी करौ पंडित, आँखेऊँ चली गई हैं का?''[2]

इस प्रकार शोषण के विरूद्ध निम्न शोषित वर्ग के सीने में दबी हुई घृणा और क्रोध की भावना आग की तरह सुलगती दिखाई देने लगी है। 'जल टूटता हुआ' में भी देखते हैं जमींदारी प्रथा समाप्त होने के पश्चात् बाबू महीप सिंह जैसे जमींदार भीतर से टूट रहे हैं किन्तु बाहर से अपना रौब दाब बनाए रखना चाहते हैं। जमींदार साहब के यहां से छोटी जाति के जगपतिया के बाप–दादों को चार बीघा जमीन मिली थी जिसके बदले दोनो भाई रात–दिन उनके यहां बेगार करते थे और जुल्म सहते थे। किन्तु अब धीरे–धीरे उनमें भय और सिहरन के स्थान पर दृढ़

*(शोध छात्रा) डॉ0 शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय, लखनऊ
**(शोध पर्यवेक्षक) गुरू घासीदास केन्द्रीय विश्वविद्यालय, बिलासपुर, छत्तीसगढ़

निर्भिकता आती जा रही थी। एक दिन रमपतिया नौकरी की तलाश में बाहर चला जाता है और जगपतिया बीमार होने के कारण काम पर नहीं आता है तो बाबू साहब बहुत बिगड़ते हैं। जगपतिया को बुलाकर डांटते, फटकारते है और गाली गलौंच करते हैं। जगपतिया उन्हें गाली देने से मना करता है व जूते की मार खाकर भी काम करने को तैयार नहीं होता है– ''उपेक्षा की चाल चलता हुआ अपने घर की ओर लौट गया। न जाने उसके सीने में कितना क्रोध, कितनी घृणा दबी हुई आग की तरह सुलग रही थी, जिस पर मजबूरियों की परतें बिछी हुई थी।''[3] सतीश सम्पूर्ण सन्दर्भ में सोचता है–परम्परावादी पीढ़ी भी जाति–पाति, ऊँच–नीच की ढहती हुई दीवार को देख रही है। इस परिवर्तन को महसूस करते हुए 'काका' उपन्यास के हलवाई काका से कहता है– ''जमाना पलट गया है। पहले गरीब–अमीर की बात इतनी नहीं थी, लोग दर्जा और जात देखते थे। वह मरजाद अब धूल में मिल गई। अब तो कोरी हो, चमार हो, एक कुल्हड़ में पीते हैं।''[4]

अब ग्रामीण अंचलों में अज्ञान, अशिक्षा व अन्धविश्वासों की समाप्ति होने लगी है। पहले पिछड़े ग्रामीण अंचलों में केवल झाड़–फूंक, टोने–टोटके, जड़ीबूटियों से ही बीमारों का इलाज होता था व अंग्रेजी दवाईयों के पीने से भ्रष्ट होने का डर था। किन्तु अब वैज्ञानिक खोजों ने गांवों में भी प्रवेश ले लिया है। वहां भी अंग्रेजी दवाइयों का उपयोग होने लगा है। उदाहरण के लिए ''सूरज किरन की छांव' में आदिवासी गोंडों के गांव में बंजारी के तापे (पिता) को बहुत तेज बुखार आया तो ओझा गुणियों की झाड़–फूंक व जड़ीबूटियों से कुछ भी फर्क नहीं पड़ा। अन्त में गांव का गायता पीपरदेही गांव से मिशनरी डाक्टर को लाया जिसकी दवाइयों व सुईयों से दो दिन बाद बंजारी के पिता ने आंख खोली व गायता को खूब असीसा।''[5]

अंचल विशेषों में शिक्षा के प्रचार से भूत–प्रेतों पर से विश्वास हटता जा रहा है। 'पानी के प्राचीर' में नीरू आंचलिक नवचेतना का प्रतीक है। बचपन से ही वह अन्याय का विरोधी रहा। दीन–हीनों के प्रति उसमें दया के भाव थे। दंगे, फसादों के वह विरूद्ध था तथा अन्धविश्वासों में उसे कतई विश्वास न था। नीरू का छोटा भाई केशव जब मॉ से कहता है, सिवान वाले खेत के पास जो बरगद है उस पर नट रहता है तो नीरू उसे डपटता हुआ कहता है, भूत–प्रेतों की बात सुनते–सुनते तुम डरपोक होते जा रहे हो। ''भूत–ऊत तो बेकार की शंकाएं है।''[6] इसी प्रकार काम कुंठित गेन्दा को हिस्टीरिया का दौरा आने पर सब गांव वालों ने कहा उसे गड़न्त पकड़े हुए है किन्तु गांव का पढ़ा–लिखा नवयुवक मलिन्द इस सम्बन्ध में रमेश व नीरू से कहता है– ''अरे भाई, इस गड़न्त–सड़न्त के चक्कर में क्या पड़ गए। लेकिन यह सब कपोल–कल्पना है।''[7]

वर्तमान समय में उत्साही पढ़े–लिखे नवयुवक गांव की कुरीतियों को दूर करने में लगे हुए हैं। उनकी दृष्टि में उदारता का भाव विद्यमान हैं। उदाहरण के लिए 'दुखमोचन' के टमका कोइली गांव में देखते हैं कुछ एक पुराण पन्थियों को छोड़ विधवा विवाह को कोई बुरा नहीं मानता। माया विधवा थी और कपिल विधुर, दुखमोचन ने उनकी इच्छानुसार आर्य समाजी ढंग से उनका विवाह करने की तैयारी की तो गांव के मास्टर टेकनाथ व नित्या बाबू जैसे दकियानूसी लोगों ने विरोध प्रकट किया और कलियुग की दुहाई दी किन्तु अधिकांश लोगों ने यही कहा– ''विधवा लड़की ने रंडुवा से सम्बन्ध कर लिया तो क्या बुरा किया? इधर–उधर भटकती और भ्रष्ट होती तो गांव कुल का नाम डुबाती ....वह अच्छा होता कि यह अच्छा हुआ?''[8]

वर्तमान समय में राजनीति ने भी हमारे जीवन के सभी पहलुओं को अत्यधिक प्रभावित किया है जिससे ग्रामीण आंचलिक जीवन भी अछूता नहीं है। अब लगभग सभी प्रमुख राजनीतिक पार्टियों का प्रवेश गांवों में हो गया है। उदाहरण के लिए 'परती परिकथा' को देखते हैं–''इस बार सोलिड वोट प्राप्त करने के लिए हर पार्टी की शाखा प्रत्येक मास अपनी बैठक में महत्वपूर्ण प्रस्ताव पास करती है।''[9] राजनीतिक सरगर्मी के कारण परानपुर के लोग अब नामनेशन, मेजरौटी, पौलटीस, पौलीसी, दिमाकृषि (डेमोक्रेसी) शब्दों को समझने व उनका धड़ल्ले से प्रयोग भी करने लगे हैं।''[10]

'मैला ऑचल' में पूर्णिया जिले के मेरीगंज ग्राम में कांग्रेस पार्टी का ही नही सोशलिस्ट पार्टी का भी जोर है। बालदेवजी गांधीवादी नेता हैं और उनमें पर्याप्त जागरूकता है। गांव में खुलने वाले मलेरिया सेंटर के मकान के लिए हर एक टोले में जाकर मदद मांगते है व हरगौरी जैसे दुष्टों के अपमानजनक व्यवहार को भी सहते है। राशन के कपड़े की पुर्जी बांटने का काम बालदेवजी को सौंपा गया था। कपड़े की मांग अधिक थी किन्तु कपड़े का कोटा कम मिला हुआ था। ''पुरैनियां में मिनिस्टर साहब आने वाले थे। उनसे कपड़े का कोटा बढ़ाने की मांग करते हुए जाने के लिए बालदेवजी ने सब स्त्री–पुरूषों को एकत्र किया। सब ''इन क्लिाब जिन्दाबाद' कालीमाय की जै' और 'गन्ही महात्मा की जै' का नारा लगाते हुए जुलूस बनाकर सनियन्त्रित ढंग से पुरैनिया पहुंचे।''[11]

'मैला ऑचल' में ही देखते हैं युगों से पीड़ित दलित शोषित संथालों को सोशलिस्ट पार्टी की सभा की खबर जितना आलोकित करती है, उतना गांव में अस्पताल खुलने की खबर भी नहीं। कॉमरेड सैनिक जी का भाषण समस्त ग्रामीण चाव से सुनते हैं।''[12] कालीचरण जब संथालों को समझाता है कि जमींदारी प्रथा अब समाप्त हो गई है। जमीन जोतने वालों की है, जो जीतेगा वही बोयेगा और खायेगा उससे उन्हें कोई बेदखल नहीं कर सकता तो उनके मस्तिष्क की उलझी हुई गुत्थी सुलझ जाती है।''[13] डॉ0 प्रशान्त भी उनसे यही बात कहते हैं। कालीचरण जैसे समाजवादी नेताओं के भाषण के द्वारा अब सब लोग अपने हकों को पहचानने

लगे हैं और समझ गए हैं कि राजपूत और ब्राह्मण बात–बात में उन पर लात और जूता चलाकर उनका शोषण नहीं कर सकते।''[14] नया तहसीलदार हरगौरी जी कि जमींदारी का समर्थक था और संथालों को उनकी जमीन से बेदखल करना चाहता था वह ऐलान करता है– ''बस, एक सौ रूपये बीघा सलामी देकर कोई भी रैयत जमीन की बन्दोबस्ती के लिए दर्खास्त दे सकता है।''[15] तो जमीन के लिए संघर्ष करते हुए गांव में नई दलबन्दी हो जाती है– ''जिन लोगों की जमीन नीलाम हुई हैं, दर्खास्तें खारिज हुई है, वे एक तरफ हैं। जिन्होंने नई बन्दोबस्ती ली है अथवा जमींदार से मांग ली है, सुपुर्दी लिखकर दे दी है या जो जमीन बन्दोबस्त लेना चाहते हैं, वे सभी दूसरी तरफ हैं।''[16] इस विद्रोह का प्रभाव मेरीगंज गांव के निर्धन मजदूरों के टोलों पर भी पड़ता है। वे खेलावन यादव और तहसीलदार हरगौरी सिंह का काम करना बन्द कर देते है। स्वयं हरगौरी विश्वनाथ बाबू से कहता है– ''कल से ही रामकिरपाल काका के गुहाल में गाय मरी पड़ी है। चमार लोगों ने उठाने से साफ इंकार कर दिया है। ....राजपूत टोले के लोगों को देखिए, दाढ़ी कितनी बड़ी–बड़ी हो गई है। नाइयों ने काम करना बन्द कर दिया है।''[17]

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि गांवों में राजनीतिक सरगर्मी के कारण पिछड़ी जातियों में अपने अधिकारों के प्रति पर्याप्त जागरूकता व सजगता आई है। हम देखते हैं वर्तमान समय में सबकुछ क्षम्य एवं जायज मानने वाले मौका परस्त स्वार्थी चाणक्य नहीं गांधी है। उदाहरण के लिए 'जल टूटता हुआ' में पंचायती चुनाव जीतने के लिए अनेक षड़यंत्र रचने वाले दीनदयाल से बदला लेने के लिए रामकुमार चाणक्य व कृष्ण की कूटनीति का समर्थन करते हुए दीनदयाल की बेटी शारदा को बदनाम करने की बात कहता है तो सतीश पर इसकी तीव्र प्रतिक्रिया होती है। वह राजकुमार की चाणक्य नीति का विरोध करता हुआ कहता है– ''मगर हमार अधिक निकट तो गांधी का उदाहरण है जिन्होंने साधन और साध्य दोनों की पवित्रता पर बल दिया है। माफ करना कुमार मैं, आदर्श को राजनीति से अलग करके नहीं देख पाता.... शारदा जैसी लड़की की इज्जत को अपनी विजय का साधन बनाना अनीति है, मुझे नामंजूर है।''[18] गन्दी राजनीति का खेल खेलने वाले बाबू महीपसिंह एवं दीनदयाल जैसे गंदे जानवरों के लिए सतीश आक्रोश भरे स्वर में कहता है– ''अब इन्हें बर्दाश्त नहीं किया जाएगा। इनका राज बदलना ही होगा।''[19]

आंचलिक जीवन में राजनीतिक सरगर्मी के कारण अपने अधिकारों के प्रति पर्याप्त सचेतनता आई है। अब वे अपने धार्मिक, सामाजिक उत्सवों के समान राष्ट्रीय पर्व भी हर्षोल्लास से मनाने लगे हैं। उदाहरण के लिए रामदरश मिश्र कृत 'जल टूटता हुआ' में साधनो के अभाव में भी भाटपार के प्राइमरी स्कूल में आजादी की वर्षगांठ मनाई जाती है। उस दिन निर्धन छात्र सिर पर टोपी व धुले हुए कपड़े पहनकर हंसी–खुशी स्कूल आते हैं। जिला बोर्ड के सदस्य बाबू महीपसिंह को झण्डा रोहण के लिए बुलाया जाता है। बालक उनके सम्मान में स्वागत गान गाते हैं और भारत माता की जै बोलते हैं। सरकार की ओर से स्कूल में लड्डू भी बांटे जाते हैं। 'सूरज किरक की छांव' में भी स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात् आदिवासी गोंड बड़े–बड़े जलसों में भाग लेते हैं जिसमें जवाहरलाल नेहरू जैसे नेता पधारते हैं और अपने लोकगीतों व लोकनृत्यों के द्वारा भावात्मक एकता का प्रसार करते हैं।''[20] आंचलिक उपन्यासों का लक्ष्य प्रारम्भ से ही 'शुद्ध मानवीय धर्म' को आधारभूमि मानकर चलने वाला रहा है। आंचलिक उपन्यासों का उद्देश्य रहा है कि आसपास का मूर्त समाज धीरे–धीरे विकसित होकर अन्तर्राष्ट्रीय बने।

सन्दर्भ :–

1. फणीश्वरनाथ 'रेणु' परती परिकथा, पृ0 16
2. उदयशंकर भट्ट, लोक–परलोक, पृ0 8
3. रामदरश मिश्र, जल टूटता हुआ, पृ0 14
4. वही, पृ0 14
5. राजेन्द्र अवस्थी, सूरज किरन की छांव, पृ0 16
6. रामदरश मिश्र, पानी के प्राचीर, पृ0 39
7. वही, पृ0 10
8. नागार्जुन, दुखमोचन, पृ0 101
9. फणीश्वरनाथ 'रेणु' परती परिकथा, पृ0 20
10. वहीं, पृ0.21
11. फणीश्वरनाथ 'रेणु' मैला आंचल, पृ0 111–115
12. वहीं, पृ0 130–34
13. वहीं, पृ0 130
14. वहीं, पृ0 194
15. वहीं, पृ0 215
16. फणीश्वरनाथ 'रेणु' मैला आंचल, पृ0 222
17. वहीं, पृ0 223
18. रामदरश मिश्र, जल टूटा हुआ, पृ0 151
19. वहीं, पृ0 157
20. रामदरश मिश्र, जल टूटता हुआ, पृ0 5

❐❐❐